भक्तामर स्तोत्र के बाद मालवधरा पर पुनः
वर्तमान जिनशासन नायक की 21 वीं सदी
की नवीनतम अद्भुत स्तुति

परम मुमुक्षु मुनि श्री प्रणम्यसागरजी महाराज विरचित

श्री वर्धमान स्तोत्र

(संस्कृत एवं हिन्दी)

पद्यानुवाद, पूजन, ऋद्धि मंत्र,
जाप्य मंत्र, हिन्दी अर्थ सहित

* प्रकाशक *
आर्हत विद्या प्रकाशन
गोटेगाँव

कृति
श्री वर्धमान स्तोत्र

आशीर्वाद
परम पूज्य आचार्य **श्री विद्यासागरजी महाराज**

रचयिता
परम मुमुक्षु मुनि **श्री प्रणम्य सागरजी महाराज**

पद्यानुवाद, पूजन, मंत्र एवं अर्थ
परम मुमुक्षु मुनि **श्री प्रणम्य सागरजी महाराज**

संस्करण
प्रथम – जनवरी 2014, 2000 प्रतियाँ
द्वितीय–13 अप्रैल 2014, महावीर जयंती, 1000 प्रतियाँ

मूल्य – 20 रु. (पुन: प्रकाशन हेतु)

प्राप्ति स्थान
श्री नवीन जैन, गोटेगाँव, 094258–37476
श्री ओम अग्रवाल, रतलाम, 094251–03766

अवसर
रतलाम में कृति के पूर्ण होने पर श्री वर्धमान स्तोत्र विधान
दिनांक 19.1.2014, रविवार

पूण्यार्जक परिवार
विजयकुमार अग्रवाल
ओम अग्रवाल
शुभम् कन्स्ट्रक्शन, रतलाम

मुद्रक
छाजेड़ प्रिन्टरी प्रा.लि., 108, स्टेशन रोड, रतलाम

विधान मण्डल

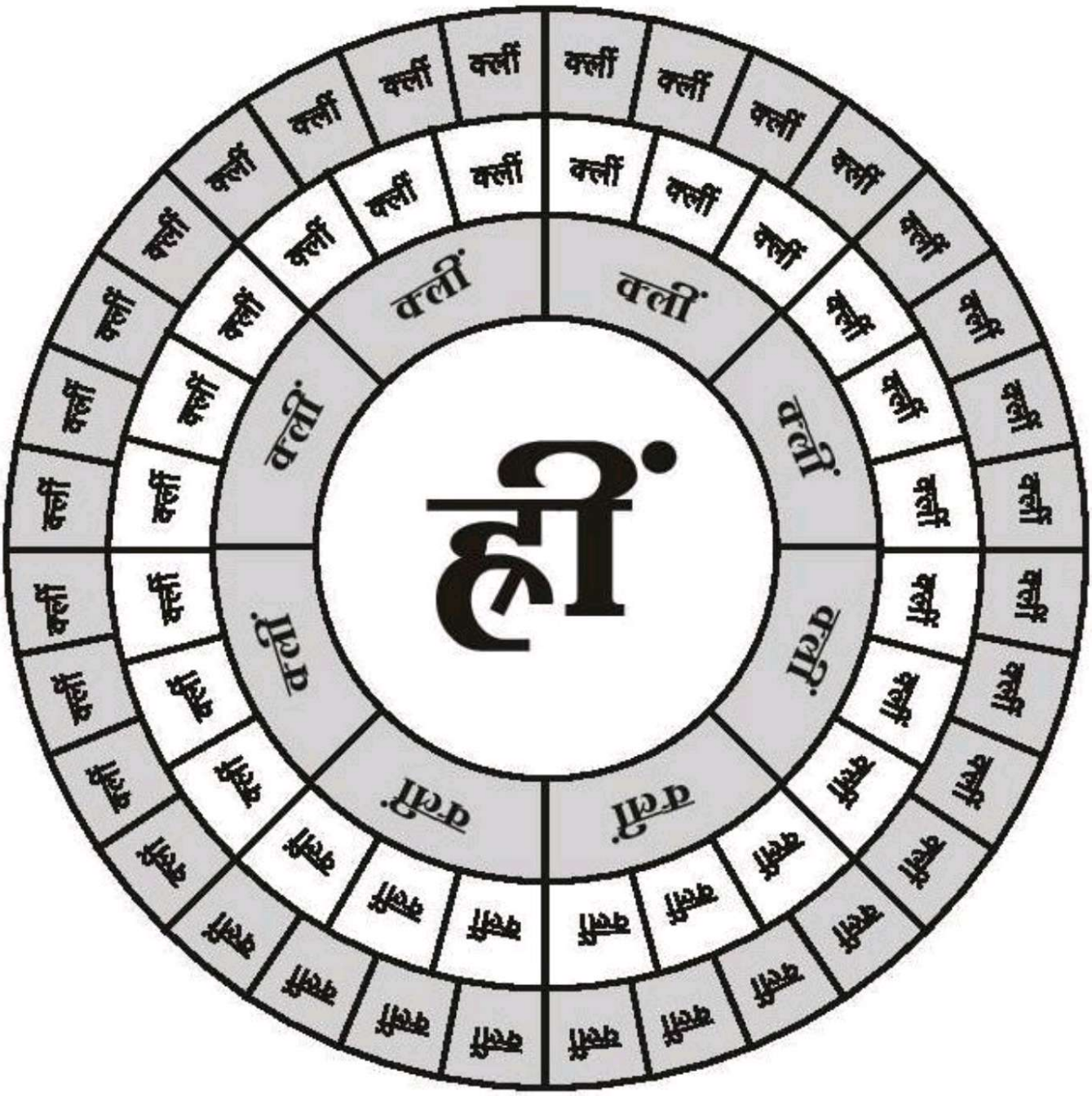

श्री वर्धमान जिन पूजन

(मुनिश्री प्रणम्यसागर विरचित)

स्थापना

हे प्रभु तेरे चरण कमल की, पूजा करने मैं आया
संस्थापित करके निज चित में आज बहुत मैं हर्षाया।
आह्वानन करता हूँ स्वामिन् अन्तिम तीर्थंकर महावीर
तिष्ठ-तिष्ठ मम हृदय विराजो सन्मति वर्धमान अतिवीर।

ॐ ह्रीं श्री वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेय! वर्धमान जिन अत्र ..

जल तो तन की शुद्धि करता तन की तृषा मिटाता है
भक्ति का जल बहे हृदय तो मन की शान्ति बढ़ाता है।
हो विशुद्ध मेरा मन भगवन मन की तृष्णा शान्त करो
यह विशुद्ध प्रासुक जल निर्मल अर्पित करता ताप हरो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

बाह्य वस्तु को देख जगत में उसको पाने की इच्छा
मन का लोभ बढ़ाती प्रतिपल आज मिली सम्यक् शिक्षा।
लोभ कषाय मिटाने भगवन मन शीतलता पा जाने
चरणन चन्दन ले कर आया तव पद रज शीतल पाने ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

खण्ड-खण्ड है ज्ञान हमारा ज्ञेयों के आकर्षण से
कर्म आवरण मैला करता राग-द्वेष स्पर्शन से।

अक्षत सम है धवल अखण्डित मेरा ज्ञान स्वभाव घना
अत: आपके चरणन अर्पित अक्षत करने भाव बना।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

विविध–विविध पुष्पों के रसमय इत्र सुगन्ध लगाये हैं
नासा से मन सूंघ–सूंघकर काम विभाव बढ़ाये हैं।
इसी वासना के कारण से देख सका ना तेरा रूप
पुष्प सुगन्धित अर्पित करता मुझे दिखे मम आत्म स्वरूप।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

रसना इन्द्रिय की लोलुपता जड़ में राग बढ़ाती है
मिष्ट इष्ट व्यंजन अति खाकर तन का ममत जगाती है।
मैं चेतन होकर भी भगवन् करता जड़ से राग रहा
चारु–चारु चरु चरण चढ़ाकर चेतन अब कुछ जाग रहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

तनघट पनघट गृहघट घट–घट भटक–भटक मैंने देखा
सरपट–सरपट दौड़–दौड़ कर चमक जगत विद्युत रेखा।
दौड़ मिटे अज्ञानमयी यह निज घट दीपक ज्योति जले
तब चरणन जड़ दीपक बाती केवल ज्योति प्रकाश मिले।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

कभी जला है कभी गला है रोंदा कूटा कटा मिटा
इन अनन्त जन्मों में भगवन् तन संग आतम खूब पिटा।
राग द्वेष से कर्मबन्ध फिर कर्म फलों से देह मिली
अष्ट कर्म के बन्ध जलाने धूप चढ़ाता बोधि मिली।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

यह हो जाय वह हो जाये अगणित जन्मों में पहले
इसी कामना से चरणन में खूब चढ़ाये रस फल ले।
अविनश्वर फल कभी न चाहा पूजन का फल भी नश्वर
किन्तु आज फल तव पद अर्पित कर चाहूँ फल अविनश्वर।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

क्या पाऊँ क्या खोऊँ प्रभुवर समझ नहीं आता मुझको
इन्द्रिय सुख मन की इच्छाएँ पागलपन लगतीं खुद को।
जल चन्दन अक्षत पुष्पों को चरु दीपक धूपन फल ले
मिश्रित करके अर्घ चढ़ाता तव पद पाऊँ मुक्ति मिलें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

श्री वर्धमान स्तोत्र

प्रथम वलय पूजा

प्रथम वलय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

1. अदृश्य को दिखाने वाली स्तुति

श्री वर्धमान जिनदेव पदारविन्द –
युग्म–स्थितांगुलिनखांशु–समूहभासि।
प्रद्योततेऽखिल–सुरेन्द्रकिरीट–कोटि:
भक्त्या 'प्रणम्य' जिनदेव–पदं स्तवीमि।।1

वर्धमान जिनदेव युगलपद, लालकमल से शोभित हैं
जिनके अंगुली की नख आभा, से सबका मन मोहित हैं।
देवों के मुकुटों की मणियां, नख आभा में चमक रहीं
उन चरणों की भक्ति से मम, मति थुति करने मचल रही।।1।।

ॐ ह्रीं सर्वातिशय समन्वित चरण कमलाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – श्री वर्धमान जिनेन्द्र देव के दोनों चरण कमलों में स्थित अंगुलियों के नखों की किरणों के समूह की आभा में देवेन्द्रों के मुकुटों के शिखर प्रकाशित होते हैं। उन जिनदेव के चरणों में भक्ति से प्रणाम करके मैं स्तुति करता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो ओहिबुद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अदृश्य वस्तु प्राप्तये वीराय नम:।।

2. चित्त एकाग्र करने वाली स्तुति

नाहंकृतेऽहमिति नात्र चमत्कृतेऽपि,
बुद्धेः प्रकर्षवशतो न च दीनतोऽहम्।

श्रीवीरदेव-गुण-पर्यय-चेतनायां

संलीन - मानस - वश: स्तुतिमातनोमि।।2।।

नहीं अहंकृत होकर के मैं, नहीं चमत्कृत होकर के
बुद्धी की उत्कटता से ना, नहीं दीनता मन रख के।
वीर प्रभू की गुण-पर्यायों, से युत नित चेतनता में
लीन हुआ है मेरा मन यह, अत: संस्तवन करता मैं।।2।।

ॐ ह्रीं शुद्ध गुणपर्यायचैतन्याय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री वर्धमान महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - यह स्तुति मैं न अहंकार से कर रहा हूँ, न यहाँ किसी प्रकार से चमत्कृत होने पर कर रहा हूँ, न ही बुद्धि की प्रकर्षता के कारण कर रहा हूँ और न दीन होने से कर रहा हूँ, किन्तु श्री वीर भगवान के गुण पर्यायों से सहित चेतना में मेरा मन लीन है इसलिए स्तुति करता हूँ।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो मणपज्जय जिणाणं ।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चित्तैकाग्रकरणाय वीराय नम:।।

3. उत्कृष्ट पुण्य फल प्रदायी स्तुति

उच्चै: कुल-प्रभवता सुखसाधनानि

सौन्दर्य-देह-सुभग-द्रविण-प्रभूतम्।

मन्ये न मोक्ष-पथ-पुण्यफलं प्रशस्तं

यावन्न भक्तिकरणाय मन: प्रयास:।।3।।

उच्च कुलों में पैदा होना, सुख साधन सब पा लेना।
सुन्दर देह भाग्य भी उत्तम, धन वैभव भी पा लेना।
मोक्ष मार्ग के लायक ये सब, पुण्य फलों को ना मानूँ
भक्ति करन का मन यदि होता, पुण्य फल रहा मैं जानूँ।।3।।

ॐ ह्रीं लौकिकालौकिक पुण्यफलप्रदाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–उच्च कुल में उत्पन्न होना, सुख के साधन होना, सुन्दर देह होना, सौभाग्य होना, खूब धन होना, इन सबको मैं मोक्ष मार्ग के योग्य प्रशस्त पुण्य का फल तब तक नहीं मानता हूँ जब तक कि भक्ति करने के लिए मन में प्रयास न होवें।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो केवलणाण जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पुण्यफलप्रदाय वीराय नमः।।

4. बुद्धि-कला-विकासिनी स्तुति

तस्मादहं शिवदसाधनसाधनाय
भक्तेरवश्य – करणाय समुद्यतोऽस्मि।
नो चिन्तयामि निज–बुद्धि–कला–स्वशक्तिं
तुक् निस्त्रपो भवति मातरि वा समक्षे।।4।।

इसीलिए अब मोक्ष प्रदायी, साधन को मैं साध रहा
मैं अवश्य भक्ति करने को, अब मन से तैयार हुआ।
मुझमें बुद्धी छन्द कला वा, शक्ती है या नहीं पता
माँ समक्ष ज्यों बालक करता, तज लज्जा मैं करूँ कथा।।4।।

ॐ ह्रीं बुद्धि कलात्मशक्ति वर्धनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – इसलिए मोक्ष देने वाले साधन को साधने के लिए मैं भक्ति अवश्य करने के लिए उद्यत होता हूँ। मैं ऐसा करने में अपनी बुद्धि, कला और आत्मशक्ति के बारे में विचार नहीं करुँगा जैसे कि शिशु माँ के सामने निर्लज्ज होकर विना विचारे चेष्टा करता रहता है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो कोट्ठबुद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं बुद्धिकलात्म शक्तिवर्धनाय वीराय नमः।।

5. लक्ष्मी प्राप्ति स्तुति

सामायिके श्रुतविचारण–पाठकाले
यः सन्मतिं स्मरति नित्यरतिं दधानः।
तस्यैव हस्तगत–पुण्य – समस्त–लक्ष्मीं
दृष्ट्वा न कोऽपि कुरुतेऽत्र बुधस्तथैव।।5।।

सामायिक में नित चिन्तन में, शास्त्रपाठ के क्षण में भी
जो सन्मति को याद कर रहा, नित्य हृदय रति धर के ही।
सकल पुण्य की लक्ष्मी उसके, हाथ स्वयं आ जाती है
ऐसा लख फिर किस ज्ञानी को, प्रभु भक्ति ना भाती है?।।5।।

ॐ ह्रीं हस्तगत लक्ष्मीकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–सामायिक में, शास्त्र चिन्तन में, पाठ करते समय जो जीव सन्मति भगवान् में राग रखकर उनको याद करता है, उसके ही हाथ में पुण्य का समस्त वैभव रहता है। यह देखकर भी इस संसार में ऐसा कौन बुद्धिमान होगा जो सन्मति भगवान् का उसी प्रकार ही स्मरण न करे?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो बीजबुद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं हस्तगत भगवत् लक्ष्मीकराय वीराय नमः।।

6. वंशवृद्धिकर स्तुति

सूते च यो जिनकुले स हि वीरवंशो
वीरं विहाय मनुतेऽन्यकुलाधिदेवम्।
आलोकमाप्य जगतीह रवेः प्रचण्डं
जात्यन्धवद् भ्रमति वा किल कौशिकः सः।।6।।

जो उत्पन्न हुआ जिन कुल में, वीरवंश का वह है पूत
वीर प्रभु को छोड़ अन्य को, मान रहा क्यों तू रे भूत।
सूरज का फैला नहिं दिखता, धरती पर चहुँ ओर प्रकाश
जन्म समय से अंध बने वे, या फिर उल्लू सा आभास।।6।।

ॐ ह्रीं वीरवंशोत्पत्तिकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-जो, जिनेन्द्र भगवान के कुल में उत्पन्न हुआ है, वह ही वीर भगवान् का वंशज है अर्थात् उसके कुल देवता भगवान महावीर ही हैं किन्तु जो वीर भगवान को छोड़कर अन्य कुलदेवता आदि को मानता है, वह प्राणी सूर्य के प्रचण्ड प्रकाश को प्राप्त करके मानो जन्मजात अन्धा बना फिरता है या फिर उल्लू की तरह सूर्य के प्रकाश में उसे कुछ दिखता नहीं है।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो पादाणुसारीणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वीरवंश जिनकुल वृद्धिकराय वीराय नमः।।

7. इच्छित फल देने वाली स्तुति

रागादिदोष-युत-मानस-देवतानां
सेवा किमप्यतिशयं न ददाति कस्य।
सेवां करोतु जिनकल्पतरोः सदैव
सेवा किमल्पफलदाऽप्यफलाऽपि तस्य।।7।।

राग द्वेष से सहित रहे जो, ऐसे देवों की सेवा
क्या अतिशय फल दे सकती है, सेवा शिवसुख की मेवा।
श्रीजिनवर हैं कल्पवृक्ष सम, उनकी सेवा सदा करो
कल्पवृक्ष की सेवा भी क्या, अल्पफला या निष्फल हो ?।।7।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्षसमफलप्रदाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – राग आदि दोष से युक्त मन वाले देवताओं की सेवा (भक्ति) किसी को कभी भी उत्कृष्ट, अतिशयकारी फल नहीं देती है। सदैव जिनेन्द्र भगवान् रूपी कल्पवृक्ष की सेवा करो। क्या कभी कल्पवृक्ष की सेवा भी बिना फल वाली या निष्फल हुई है ? अर्थात् नहीं हुई है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो संभिण्णसोदाराणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मनोवांछित फल प्रदाय वीराय नमः।।

8. सर्व अनिष्ट ग्रह निवारक स्तुति

ये व्यन्तरादिसुर–भावन–देव–वृन्दाः
कृत्वा तु यस्य नमनं सुखमाप्नुवन्ति।
देवाधि–देव–शुभ–नाम–पवित्र–मन्त्रो
व्याहन्त्यनिष्टमखिलं किमु विस्मयन्ति।।8।।

भवनवासि व्यन्तर देवो के, सुर समूह से वन्दित हैं
जिनवर के चरणों में झुक वे, सुख पाते आनन्दित हैं।
देवों के भी देव प्रभू का नाम, मन्त्र है पूजित है
सब अनिष्ट यदि दूर हो गये, बड़ी बात क्यों विस्मित है?।।8।।

ॐ ह्रीं सर्वानिष्ट विनाशकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – जो व्यन्तर आदि देव और भवनवासी आदि देवों का समूह है वे देव भी जिन जिनेन्द्र भगवान् को नमन करके सुख प्राप्त करते हैं, उन्हीं देवाधिदेव के शुभ नाम का पवित्र मंत्र यदि सभी अनिष्टों को नाश कर दें तो इसमें विस्मय क्या करते हो ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरासादणमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वानिष्ट ग्रह निवारकाय वीराय नमः।।

वलय अर्घ

विद्याब्धि–सूरि–पद–पङ्कज–सौरभालि–
शिष्य–प्रणम्य–मुनिना जिनदेव भक्त्या।
श्री वर्धमान–जिन–संस्तवनं व्यधायि
तस्यादिमेऽत्र वलयेऽर्चनयोल्लसामि।

ॐ ह्रीं अष्टदल कमलाधिपतये श्री वर्धमान जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

द्वितीय वलय पूजा

द्वितीय वलय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

9. कालसर्पादि योग निवारक स्तुति

आस्तां सुदु:षम–कला–कलिकाल–कालस-
त्वन्नाम–दर्श–मननं प्रतिमाप्यलं स्यात्।
हस्तंगते गरुड–मन्त्र–विधान–सिद्धे:
कालादि–सर्प–कृतयोग–भयेन किं स्यात्।।9।।

भले बना हो कलीकाल का, प्रभाव सब पर दुखदायी
दर्शन, मनन, सुनाम आपका, बिम्ब मात्र भी सुखदायी।
सिद्ध किया ही गरुड़मन्त्र ही , जिसके हाथ पहुँच जाये
काल सर्प के योग भयों से, फिर किसका मन डर पाये ?।।9।।

ॐ ह्रीं सर्वानिष्ट योग भय निवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–भले ही बहुत दु:षम काल के कलिकाल का समय बना रहे किन्तु वीर भगवान् का नाम, उनका दर्शन, उनके बारे में विचारणा और उनकी प्रतिमा ही कलिकाल के दोष को दूर करने के लिए पर्याप्त है। अरे ! जिसे गरुड़ मन्त्र के विधान की सिद्धि हाथ में आ गयी हो उसे कालसर्प आदि योगों का भय क्या करेगा ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरफासत्तमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः सर्वानिष्टयोग निवारकाय वीराय नमः।।

10. सर्व रोग हरण स्तुति

रागादि–रोग–हरणाय न कोऽत्र वैद्यः
कर्माष्ट बन्ध–विघटाय रसायनं न।
यो यन्न वेत्ति स न तत्र मतं प्रमाणं
वैद्यस्त्वमेव तव वाक्च रसायनं तत्।।10।।

राग रोग का नाश करूँ मैं, दिखता वैद्य नहीं कोई
अष्ट कर्म बन्धन मिट जाए, नहीं रसायन है कोई।
जो जिस विद्या नहीं जानता, नहीं प्रमाणिक वह ज्ञानी
वैद्य आप हो अतः बन गई महा रसायन तव वाणी।।10।।

ॐ ह्रीं दुर्निवार रोग विनाशाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–इस संसार में राग आदि रोग को नष्ट करने के लिए कोई वैद्य नहीं है और आत्मा से अष्ट कर्म के बन्धन को दूर करने के लिए कोई रसायन नहीं है। जो जिस रोग का जानकार नहीं है, वह उस रोग में प्रामाणिक नहीं माना जाता है। इसलिए हे भगवन् ! आप ही वैद्य हैं और आपके वचन ही रसायन हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरघाणत्तमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः दुर्निवाररोग रसायनाय वीराय नमः।।

11. मिथ्या आग्रह नाशक स्तुति

शस्त्रास्त्रभ्रूविकृतिलोहित–नेत्रवन्तं
क्रोड़ीकृताघ–ममतार्त–विरूपरौद्रम्।

देवं मनन्ति जगति प्रविजृम्भितेऽपि
चिद्बोधतेजसि सतीह किमन्धता वा।।11।।

शस्त्र अस्त्र से सहित हुए जो, भ्रकुटि चढ़ रहीं लाल नयन
ममता पाप दु:ख ले बैठे, देह विरूप क्रूर है मन।
लोग इन्हें भी प्रभू मानते, जिस जग में प्रभु आप रहें
चेतन ज्ञान प्रकाश दिखे ना, और अन्धता किसे कहें ?।।11।।

ॐ ह्रीं मिथ्याग्रहापहरणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - शस्त्र-अस्त्र रखने वाले, भौंओ को विकृत किये हुए, लाल-लाल आँखों वाले, पाप-ममत्व तथा पीड़ा को अपने पास रखें हुए, विद्रूप और भयंकर दिखने वालों को भी लोग इस संसार में आपके चैतन्य ज्ञान का प्रकाश फैला होने पर भी देव मानते हैं, इससे बढ़कर अन्धता और क्या होगी ?

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो दूरसवणत्तमदि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्र: मिथ्याबुद्धि हरणाय वीराय नम:।।

12. पुण्योदयकरी स्तुति

पुण्योदयेन तव तीर्थकराख्यकर्म-
माहात्म्यत: कलिलघातिविधिप्रणाशात्।
तीर्थोदयोऽभवदिहात्म-हिताय वीर !
पुण्यद्विषैर्नु महिमा कथमभ्युपेत: ।।12।।

तीर्थंकर शुभ नाम कर्म के, पुण्य उदय की महिमा से,
चार घातिया पाप नाश से, तीर्थोदय की गरिमा से।
पुण्य उदय से उदित तीर्थ ही, वीर! आत्महित का कारण
बने पुण्य के द्वेषी उनको, हो तब महिमा क्यों धारण ?।।12।।

ॐ ह्रीं पुण्यतीर्थोदयाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – पाप रूप घाति कर्मों के नाश से आपके तीर्थंकर नाम कर्म के माहात्म्य से जो पुण्य उदय हुआ है। उसी पुण्योदय से इस संसार में हे वीर भगवन् ! आपका तीर्थोदय हुआ था जो कि सभी जीवों के आत्महित के लिए है। फिर पुण्य से द्वेष रखने वाले आपके तीर्थ की महिमा को कैसे अंगीकार कर सकते हैं? अर्थात् पुण्य से द्वेष रखने वाले तीर्थ और भगवान् की महिमा नहीं समझ सकते हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरदरसित्तमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः पुण्यतीर्थोदयाय वीराय नमः।।

13. समृद्धिवर्धक स्तुति

गर्भोत्सवे प्रतिदिनं पृथुरत्नवृष्टि –
र्जन्मोत्सवे सकल-लोक-सुशान्त-वृत्तिः।
सर्वातिशायनगुणा दश जन्मनस्ते
सूक्ष्मेण को गणयितुं गुणतां तु शक्तः।।13।।

गर्भ समय के कल्याणक में, प्रतिदिन रत्नों की वर्षा
जन्म समय के कल्याणक में, सकल लोक में सुख हर्षा।
सूक्ष्म रूप से तव गुण गण को, गिनने में हो कौन समर्थ?
दश अतिशय जो मूर्त रूप हैं, समझो उनमें कितना अर्थ।।13।।

ॐ ह्रीं सर्वसमृद्धिवर्धकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-गर्भ कल्याणक के समय प्रतिदिन बहुत रत्नों की वर्षा होती है। जन्म कल्याण के समय पूरे लोक में एक क्षण के लिए शान्ति हो जाती है। आपके जन्म समय के सर्वोत्कृष्ट दश गुण हैं किन्तु सूक्ष्म रूप से उन गुणों के भाव को कौन गिनने में समर्थ हो सकता है ? अर्थात् कोई नहीं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दसपुव्वीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः सर्वसमृद्धिकराय वीराय नमः।।

14. जन्मोत्सव स्तुति

निःस्वेदताऽस्ति वपुषो मलशून्यता ते
स्वाद्याकृतिः परमसंहननं सुरूपम्।
सौलक्ष्य –सौरभ–मपार–समर्थता च
सप्रीतिभाषण–मथा–सम–दुग्धरक्तम्।।14।।

स्वेद रहित है निर्मल है तनु, परमौदारिक सुन्दर रूप
प्रथम संहनन पहली आकृति, शुभलक्षणयुत सौरभ कूप।
अतुलनीय है शक्ति आपकी, हित–मित–प्रिय वचनामृत हैं
दुग्धरंग सम रक्त देह का, दश अतिशय परमामृत हैं।।14।।

ॐ ह्रीं दश जन्मातिशयधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–शरीर का पसीना रहित होना (1), मल–मूत्र रहित होना (2), श्रेष्ठ प्रथम संस्थान (3), उत्कृष्ट संहनन (4), सुन्दर रूप होना (5), शुभ लक्षणों से सहित शरीर होना(6), सुगन्धित शरीर होना (7), अपार शक्ति होना (8), सबसे प्रेम पूर्वक बोलना (9), और किसी से समानता नहीं रखने वाला शरीर में सफेद रक्त होना (10), ये जन्म के दश अतिशय हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो चउदसपुव्वीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः जन्मोत्सव धारकाय वीराय नमः।।

15. केवलज्ञानोत्सव स्तुति

क्रोशं चतुःशतमिलाफलके सुभिक्षः
शून्यश्च जीववधभुक्त्युपसर्गतायाः।

विद्येश्वर: खगमनं नख-केश-वृद्धि-
छाया-विहीन-मनिमेष-मुखं चतुष्कम्।।15।।

कोस चार सौ तक सुभिक्ष है, प्राणी वध उपसर्ग रहित
बिन भोजन नित गगन गमन है, नख केशों की वृद्धि रहित।
बिन छाया तनु चार मुखों से, निर्निमेष लोचन टिमकार
सब विद्याओं के ईश्वर हो, दश केवल अतिशय सुखकार।।15।।

ॐ ह्रीं दशकेवलज्ञानातिशयधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-चार सौ कोश तक पृथ्वी तल पर सुभिक्ष होना (1), जीव वध का अभाव(2), भोजन का अभाव(3), उपसर्ग का अभाव(4), सभी विद्याओं के ईश्वर(5), आकाश में गमन(6), नख, केश की वृद्धि नहीं होना (7), छाया नहीं होना (8), टिमकार रहित मुख (9), और चार मुख होना (10), ये केवलज्ञान के दश अतिशय हैं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्र: केवलज्ञानोत्सवधारकाय वीराय नम:।।

16. आनन्ददायी स्तुति

जन्मक्षणे प्रथित-पर्वत-मन्दराख्ये
सौधर्म-देव-विहितस्नपनोपचारे।
आनन्दनिर्भररसेन सुविस्मित: सन्
'वीरं' चकार तव नाम सुरेन्द्रमुख्य: ।।16।।

जन्म समय पर मन्दर मेरु, पर्वत जो विख्यात रहा
जिस पर ही सौधर्म इन्द्र ने, प्रभु का कर अभिषेक कहा।
'वीर' आपका नाम यही शुभ, धरती पर विख्यात रहे
हो आनन्दित विस्मित होकर, देवों के भी इन्द्र कहे।।

ॐ ह्रीं सर्वानन्दकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-जन्म कल्याणक के समय मन्दर (सुमेरु) नाम के प्रसिद्ध पर्वत पर सौधर्म देव के द्वारा अभिषेक क्रिया की गई थी। आनन्द रस से भरे उस सौधर्म इन्द्र ने उसी पर्वतपर विस्मित होते हुए आपका नाम 'वीर' यह शुभ नाम रखा था।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो पण्णसमणाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्र: सर्वानन्दकराय वीराय नम:।।

17. सर्पादि भय निवारक स्तुति

क्रीडाक्षणे सुरतुकै: सह शैशवेऽपि
आयात एव भुवि संगमनाम देव:।
नागस्य रूपमवधार्य भयाय रौद्रं
निर्भीरभू- 'र्महतिवीर' इति प्रसिद्धि:।।17।।

शैशव वय में क्रीड़ा करते, देव बालकों के संग आप
संगम देव तभी आ पहुँचा, देने को प्रभु को संताप।
नाग रूप धर महा भयंकर, लखकर वीर न भीत हुए
'महावीर' यह नाम रखा तब, देव स्वयं सब मीत हुए।।17।।

ॐ ह्रीं सर्पादिजन्तुभयनिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-बाल्यावस्था में भी देव-बालकों के साथ क्रीड़ा के समय संगम नाम का देव पृथ्वी पर आया उस देव ने नाग का भयंकर रूप वीर बालक को डराने के लिए रखा। वीर निर्भीक थे। इसलिए ही संगम देव ने 'महति वीर' (महावीर) नाम रख दिया। इस प्रकार 'महावीर' नाम प्रसिद्ध हुआ।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो पत्तेयबुद्धाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्र: सर्पादिभय निवारकाय वर्धमानाय नम:।।

18. संदेह निवारक स्तुति

शंड्कां निधाय हृदि तौ गगनं चरन्तौ
ऋद्धीश्वरौ विजय–संजयनामधेयौ
त्वामीश! वीक्ष्य लघु दूरत एव हर्षात्
प्रोच्चार्य 'सन्मति' सुनाम गतौ विशड्कौ।।18।।

शास्त्र विषय संदेह धारकर, चले जा रहे दो मुनिराज
संजय विजय नाम हैं जिनके, गगन ऋद्धि ही बना जहाज।
देख दूर से हर्षित होकर, लख कर ही नि:शंक हुए
धन्य–धन्य है इनकी मति भी, 'सन्मति' कहकर दंग हुए।।18।।

ॐ ह्रीं बुद्धिसंदेह वारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–संजय–विजय नाम के दो ऋद्धिधारी मुनीश्वर अपने हृदय में संदेह धारण करके आकाश में चले जा रहे थे। हे ईश ! आपको दूर से ही देखकर शीघ्र ही वे संदेह रहित हो गए और बड़े हर्ष से 'सन्मति' यह शुभ नाम कहकर चले गए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो वादित्तबुद्धीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्र: बुद्धिसंदेह हराय वर्धमानाय नम:।।

19. दीक्षा प्रदायी स्तुति

तीर्थेश्वरा विगतकाल–चतुर्थकेऽस्मिन्
संदीक्षिता बहुलसंख्यक – भूमिनाथै:।
जानन्नपि त्वमगमो न हि खेदमेको
वाचंयमो द्विदशवर्षमभी–र्विहृत्य ।।19।।

इस चतुर्थ काल में जितने , पहले जो तीर्थेश हुए
कई कई राजाओं के संग, दीक्षित हो तपत्याग किए।
आप जानते थे यह भगवन, फिर भी आप न खेद किए
मौन धारकर एकाकी हो, बारह वर्ष विहार किए।।19।।

ॐ ह्रीं जिनदीक्षाधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – इस बीते हुए चतुर्थ काल में तीर्थंकर बहुत से राजाओं के साथ दीक्षित हुए थे। आप यह जानते हुए भी एकाकी रहकर मौन रहते हुए और बारह वर्ष तक निर्भीक होकर विहार करते रहे किन्तु कभी खेद को प्राप्त नहीं हुए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अणिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्र: जिनदीक्षा प्रदाय वर्धमानाय नम:।।

20. चारित्र विशुद्धि वर्धक स्तुति

प्राप्त-क्षयोपशममात्रकषायतुर्यो
मत्तेऽपि वृद्धि-मुपयाति परं चरित्रम्।
त्वं 'वर्धमान' इति नाम भुवि प्रपन्नो
न्यासे प्रभाव इह नामनि भावमुख्यात्।।20।।

चौथी कषाय मात्र का जिनको, क्षयोपशम गत भाव रहा
हो प्रमत्त यदि बीच-बीच में, वर्धमान चारित्र रहा।
इसीलिए तो नाम आपका, 'वर्धमान' भी ख्यात हुआ
नाम न्यास में भी भावों, से न्यास बना यह ज्ञात हुआ।।20।।

ॐ ह्रीं सामायिक चारित्रवृद्धिकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – मात्र चतुर्थ संज्वलन कषाय का क्षयोपशम आपकी आत्मा में था। प्रमत्त गुणस्थान में आने पर भी आपका चारित्र वृद्धिंगत था। अर्थात् आप वर्धमान चारित्र के धारी थे। इस प्रकार इस पृथ्वी पर आप 'वर्धमान' नाम को प्राप्त हुए। भावों की मुख्यता से ही नाम निक्षेप में प्रभाव आता है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो महिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं चारित्र वृद्धि कराय वर्धमानाय नम:।।

21. रौद्र उपद्रव नाशक स्तुति

दीक्षोत्सवे तपसि लीनमना बभूव
चैको भवान् प्रविजहार सहिष्णुयोगी।
उज्जैनके पितृवने समधात् समाधि–
मुग्रैरुपद्रवसहेऽ'प्यतिवीर' संज्ञा।।21।।

तप कल्याणक होने पर प्रभु, तप में ही संलीन हुए
एकाकी बन कर विहार कर, सहनशील योगी जु हुए।
उज्जैनी के मरघट पर जब, आप ध्यान में लीन हुए
उग्र उपद्रव सहकर के ही, नाम लिया 'अतिवीर' हुए।।21।।

ॐ ह्रीं उग्रोपद्रवनाशकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–दीक्षा कल्याणक होने पर आप तप में लीन हो गए थे। आप सहनशील योगी थे, अकेले ही विहार करते थे। उज्जैन नगरी के श्मशान में जब आप समाधि (ध्यान) धारण किये थे तभी उग्रता के साथ हुए उपद्रव को सहन किया। जिससे आपकी 'अतिवीर' संज्ञा हुई।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो लघिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वोपसर्ग निवारकाय महावीराय नमः।।

22. अनिष्ट बंधन विनाशी स्तुति

या बंधनैश्च विविधै: किल संनिबद्धा
संपीडिता विलपिता समयेन नीता।
भक्त्योल्लसेन विभुतां प्रविलोकमाना
सा चन्दना गतभया तव लोकनेन।।22।।

नाना विध बंधन ताडन पा, जो पर घर में बंधी पड़ी
पीड़ित होकर रोती रहती, कष्ट सहे हर घड़ी – घड़ी।

वीर प्रभू का दर्शन पाऊँ, भक्ति और उल्लास भरी
दर्शन पाकर वही चन्दना, भय-बन्धन से तब उभरी।।22।।

ॐ ह्रीं अनिष्टबंधनविनाशाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - जो अनेक प्रकार के बंधनों से बंधी थी, पीड़ित थी, रोती रहती थी, समय को गुजार रही थी। ऐसी चन्दना ने भी भक्ति और उल्लास से जब आपकी विभुता को देखी तो आपको देखने मात्र से हे भगवन् ! वह भय मुक्त हो गई थी।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो गरिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं ब्लूं अनिष्टबंध विनाशाय जिनाय नमः।

23. उत्कृष्ट पद प्रदायी स्तुति

ज्ञानोत्सवेऽशुभदतीव सभा पृथिव्या
गत्वोपरीह जिन! पञ्चसहस्र-दण्डान्।
मिथ्यादृशां न भवतो मुख-दर्श-पुण्य-
मुच्छ्राय एव भगवन्! सुविराजमानः।।23।।

ज्ञानोत्सव होने पर प्रभु की, समवसरण सी सभा लगी
पाँच हजार धनुष ऊपर जा, चेतनता जब पूर्ण जगी।
मिथ्यादृष्टि जीवों को तव, मुख दर्शन का पुण्य कहाँ?
इसीलिए इतने ऊपर जा, शोभित होते बैठ वहाँ।।23।।

ॐ ह्रीं उत्कृष्टपदविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-हे जिन ! ज्ञान कल्याणक के समय इस पृथ्वी से पाँच हजार धनुष ऊपर जाकर आपकी समवसरण सभी लगी थी जो अत्यन्त शोभित होती थी। (घोर) मिथ्यादृष्टियों को आपके मुख दर्शन का पुण्य नहीं है इसलिए ही हे भगवन्! आप इतनी ऊँचाई पर विराजमान हुए थे।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पत्तरिद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं नमः।

24. अहंकार नाशी स्तुति

मानोद्धतः सकलवेदपुराणविद् यो
मानादिभूस्थजिन–बिम्बमथेन्द्र–भूतेः।
मानो गतो विलयतामवलोक्य तेऽस्य
सामर्थ्यमन्यपुरुषेषु न दृश्यते तत्।।24।।

हुआ मान से उद्धत है जो, सकल पुराण शास्त्र ज्ञाता
मानस्तम्भ बने जिन–बिम्बों, को लख इन्द्रभूति भ्राता।
मान रहित हो खड़े रहे ज्यों, भूल गये हों सब कुछ ही
छोड़ आपको अन्य पुरुष में, यह प्रभाव क्या होय कभी?।।24।।

ॐ ह्रीं मिथ्यामदविनाशाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – जो मान से उदण्ड था, समस्त शास्त्र और पुराणों का जानकार था, ऐसे इस इन्द्रभूति का मान भी मानस्तम्भभूमि में स्थित जिनबिम्बों को देखकर विलय हो गया था। इसलिए आपके जैसी सामर्थ्य अन्य पुरुषों में नहीं देखी जाती है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पाकामद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं क्रौं मिथ्यामदविनाशाय जिनाय नमः।।

25. संकट मोचन स्तुति

साक्षाद् विलोक्य सचराचरविश्वमन्तः
कैवल्य–बोधवदनन्तसुखस्य भोक्ता।

यैर्मन्यते जिन! सदा परमात्मरूप–
मित्थं कथं वद भवेयु–रिहार्तयुक्ता:।।25।।

अन्तरंग में निज आतम से, विश्व चराचर देख रहे,
केवल ज्ञान साथ जो होता, वह अनन्त सुख भोग रहे।
हे जिन! तव परमात्म रूप को, मान रहे जो इसी प्रकार
अहो! बताओ कैसे फिर वे, दु:खी रहेंगे किसी प्रकार।।25।।

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानसुखसहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – अपनी आत्मा में चराचर सहित विश्व को प्रत्यक्ष देखकर केवलज्ञान के साथ होने वाले अनन्त सुख के आप भोक्ता हुए। हे जिन ! जो परमात्मा रूप को इसी प्रकार मानते हैं वे इस लोक में बताओ कैसे दु:खी रह सकते हैं ? अर्थात् नहीं रह सकते हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो ईसत्तड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं णमो अरुहंताणं नम:।।

26. कुलदीपक दायी स्तुति

अभ्यन्तरे बहिरपीश! विभासमानो
विश्वं तिरस्कृतमहोऽत्र चिदर्चिषैतत् ।
हे ज्ञातृवंश–कुल–दीपक! चेतनायां
यत् सद् विभाति यदसन्न विभाति तत्र।।26।।

बाहर भीतर ईश! आप तो, पूर्ण रूप से भासित हो
तव चेतन के महा तेज से, तेज समूह पराजित हो।
ज्ञातृवंश के हे कुल दीपक!, ज्ञातापन चेतनता में
जो है वह प्रतिभासित होता, जो ना दिखता ना उसमें।।26।।

ॐ ह्रीं चैतन्यपूर्ण-तेजः सहिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-हे ईश ! आप बाहर-भीतर प्रकाशमान हैं। अहो ! आपकी चेतना का यह प्रकाश सब ओर से यहाँ से तिरस्कृत कर रहा है। हे ज्ञातृवंश के कुलदीपक ! आपकी ज्ञान चेतना में जो वस्तु है वह दिखती है और जिसका अस्तित्व नहीं है वह नहीं दिखती है।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो वसित्तड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं पूर्णचैतन्याय वीराय नमः।।

27. सम्यक्त्व प्रदायी स्तुति

त्वं चित्क्रमाक्रमविवर्तविशुद्धि-युक्तः
स्वात्मानमात्मनि विभाव्य विभावमुक्तः।
वैभाविकं वपुरिदं जिन! पश्यसि स्वं
सम्यक्त्वकारणमहो व्यभवत् परेषाम्।।27।।

चेतन की गुण-पर्यायों में, तुम विशुद्धि युत होकर के
आतम में आतम को पाकर, सब विभाव को तज कर के।
निज शरीर को भी हे जिनवर!, वैभाविक ही देख रहे
दूजों को वह ही तन देखो!, सम्यगदर्शन हेतु लहे।।27।।

ॐ ह्रीं सर्वगुणपर्यायज्ञाताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - हे जिन ! चेतना के गुण, पर्यायों के परिणमन में आप विशुद्धि से युक्त हैं। अपनी आत्मा को अपनी आत्मा में ही अनुभव करके आप विभावों से रहित हैं। आप अपने इस वैभाविक शरीर को भी देख रहे हैं। अहो ! आपका शरीर वैभाविक होकर भी दूसरों के लिए सम्यक्त्व का कारण बना है।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो अप्पडिघादड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं विशुद्धिवर्धकाय जिनाय नमः।।

28. पराक्रमकारी स्तुति

छत्रत्रयं वदति ते त्रिजगत्प्रभुत्वं
शास्ति स्वयं न मुखतो मदगर्वशून्य:।
सत्यं सतां विधिरयं हि पराक्रमाणां
वीरो जितेन्द्रियमना भगवानसि त्वम्।।28।।

तीन लोक में प्रभुता तेरी, तीन छत्र कह देते हैं
मद घमण्ड से रहित हुए जो, कैसे कुछ कह सकते हैं।
महा पराक्रम धारी सज्जन, इसी रीति से रहते हैं
इसीलिए तो वीर जितेन्द्रिय, भगवन तुमको कहते हैं।।28।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – तीनों छत्र आपके वैभव का बखान इस लोक के लोगों के लिए कर रहे हैं। जो मद-गर्व से रहित होता है वह स्वयं अपने मुख से अपनी विभुता नहीं कहता है। सच है – पराक्रमी सत्पुरुषों की ऐसी ही रीति होती है। इसलिए आप वीर हैं। मन, इन्द्रियों के विजेता हैं और भगवान् हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अंतड्ढाणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं छत्रत्रयसहिताय महावीराय नम:।।

29. सिंहासन दायी स्तुति

सिंहासनोपरि विराजितुमत्र लोभा
वाञ्छन्त्युपायशतकै र्भुवि चित्तलोभात्।
लाभेऽपि तस्य चतुरङ्गुलमूर्ध्वमेति
निर्लोभता वद भवत्तुलिता क्व चान्यै:।।29।।

देखा जाता है लोभी जन, सिंहासन पर बैठन को
करें उपाय सैकड़ों जग में, मन में लोभ की ऐंठन हो।

सिंहासन का लाभ हुआ पर, आप चार अंगुल ऊपर
कहो आप सा निर्लोभी क्या, और कहीं हो इस भूपर।।29।।

ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यसहिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – लोभी लोग इस संसार में अपने मन के लोभ के कारण सैकड़ों उपाय करके सिंहासन पर बैठना चाहते हैं। आपको सिंहासन का लाभ होने पर भी आप उससे चार अंगुल ऊपर रहे। अन्य लोगों के साथ आपकी तुलना बताओ कैसे की जाय ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो कामरूवड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सिंहासनोपरिशोभिताय वीराय नमः।।

30. छल कपट नाशी स्तुति

ऊर्ध्वं मुहु र्गदति याति च निम्नवृत्तिं
मायाविनां तु मनसा सम वक्रवृत्तिम्।
तेभ्यस्तनु स्तव विभाति सुचामरौघो
मायातिशून्यहृदयो भवदन्यना न।।30।।

ऊपर जाकर बार-बार, फिर, फिर नीचे आते चामर
मायावी जन कुटिल मना ज्यों, मानो वक्रवृत्ति रखकर।
चमरों से शोभित प्रभु तन ये सबसे मानो कहता है
अन्य किसी का हृदय यहाँ पे, बिन माया ना रहता है।।30।।

ॐ ह्रीं सुरचामरशोभिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-ये सुन्दर चामरों का समूह बार-बार ऊपर जाकर नीचे आ जाता है। मायावी लोगों की तो मन के साथ कुटिल वृत्ति रहती है। यह बात चामरों का

समूह कहता है। इन चामरों के समूह से आपका शरीर सुशोभित होता है जो यह कह रहा है कि आपके अलावा कोई पुरुष माया से अत्यन्त शून्य हृदय वाला नहीं है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो गमणगामिड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सुरचामर–शोभिताय वीर–जिनाय नमः।।

31. मुख तेज वर्धन स्तुति

अस्मिन्भवे भविनि रोषविभावभाजि
चैतन्यवत्यपि मुखं न बिभर्ति तेजः।
भामण्डलं हि परितो तव भासमानं
यद् वीर! वक्ति भविसप्त–भवानुगाथाम्।।31।।

क्रोध विभाव भाव वाले जो, भव्य जीव संसृति में हैं
चेतन होकर के भी उनके, मुख पर तेज नहीं कुछ है।
वीर प्रभु तव मुख मण्डल का, तेज बताता भामण्डल
भव्य जनों के सप्त भवों की, गाथा गाता है प्रतिपल।।31।।

ॐ ह्रीं भामण्डलप्रातिहार्य सहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – इस संसार में रोष रूप विभाव भावों को रखने वाले भव्य जीवों में चेतनता होने पर भी मुख तेज को धारण नहीं करता है। हे वीर ! आपके मुख के चारों ओर यह भामण्डल प्रकाशमान हो रहा है वह भव्य जीवों के सात भवों की गाथा कह रहा है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो जलचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं भामण्डलतेजः सहिताय वीराय नमः।।

32. सम्मोहनकारी स्तुति

चित्रं विभो! त्रिभुवनेश! जिनेश! वीर!
न्यूने त्वयि द्रुतविहास्य-रतेन देव!
दिव्यध्वनिं तदपि कर्णयितुं तु भव्या
आयान्ति ते रतिवशादनुयन्ति हास्यम्।।32।।

तीन लोक के हो ईश्वर तुम, तुम जिनेश तुम वीर विभू
हास्य नहीं है रती नहीं है, तव चेतन में अहो प्रभू।
फिर भी दिव्यध्वनि को सुनकर, भव्य जीव रति भाव धरें
तत्त्व ज्ञान पी-पीकर मानो, हो प्रसन्न मन हास्य करें।।32।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिप्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - हे विभो ! हे त्रिभुवन के ईश ! हे जिनेश ! हे वीर ! आपमें शीघ्र हास्य और रति भाव नहीं हैं फिर भी यह आश्चर्य है कि हे देव ! जो भव्य जीव आपकी दिव्य ध्वनि को सुनने के लिए आते हैं, वे राग के कारण से हास्य को प्राप्त होते हैं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो जंघाचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं दिव्योपदेशमोहिताय वीराय नमः।।

वलय अर्घ

विद्याब्धि-सूरि-पद-पङ्कज-सौरभालि-
शिष्य-प्रणम्य-मुनिना जिनदेव भक्त्या।
श्री वर्धमान-जिन-संस्तवनं व्यधायि
तस्य द्वितीय वलयेऽर्चनयोल्लसामि।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिदल कमलाधिपतये श्री वर्धमान जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

तृतीय वलय पूजा

तृतीय वलय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

33. शोक विनाशक स्तुति

सामीप्यतोऽप्यरतिशोकमतिं विहाय
वैडूर्यपत्र-हरिताभ-मणिप्रशाख:।
सम्प्राप्य नाम लभते विटपोऽप्यशोक:
शोभां नरोऽपि यदि किं तव भक्तितोऽत:।।33।।

नाना विध वैडूर्य मणी की, हरित मणिमयी शाखायें
तव समीपता से ही तज दी, अरति शोक की बाधायें।
मानो इसीलिए उस तरु का नाम अशोक कहा जाता
क्या आश्यर्च आप भक्ति से, यदि मनुष्य शोभा पाता।।33।।

ॐ ह्रीं अशोक वृक्ष प्रातिहार्य सहिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आपके सामीप्य से अरति और शोक बुद्धि को छोड़कर वृक्ष भी अशोक नाम पा लेता है और वैडूर्य के पत्ते तथा हरित आभा वाली मणि की शाखा वाला हुआ शोभा को पाता है। अत: यदि आपकी भक्ति से मनुष्य भी अरति, शोक को छोड़कर शोभा पा लेता है तो इसमें क्या बात है ? अर्थात् कुछ भी नहीं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो पुप्फफल चारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं अशोकवृक्षयुक्ताय वीराय नम:।।

34. आत्महत्या विनाशक स्तुति

यान्ति क्व भो! भविजना भयभीतवश्यात्
कुर्वन्ति किं निजहतिं च जुगुप्सया वा।
सम्प्राप्नुवन्त्वभयता-मभय-प्रसिद्ध-
पाद-द्वयं वदति वादितदुन्दुभिस्ते।।34।।

अरे–अरे ओ भविजन क्यों तुम, क्यों इतने भयभीत हुए
आत्मग्लानि से आत्मघात को, करने क्यों तैयार हुए।
अभय प्रदायी चरण कमल को, प्राप्त करो अरु अभय रहो
देव दुन्दुभी बजती–बजती, यही कह रही वीर प्रभो।।34।।

ॐ ह्रीं देवदुन्दुभिप्रातिहार्य सहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–भो ! भव्य जीव आप भयभीत होने से कहाँ जा रहे हो और ग्लानि से आत्महत्या क्यों करते हो ? आप लोग अभय के लिए प्रसिद्ध इन दोनों चरणों को प्राप्त करो और अभयता प्राप्त करो ऐसा आपकी बजती हुई देव दुन्दुभि कहती है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अग्गिधूमचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं देवदुन्दुभिप्रातिहार्य समन्विताय वीराय नमः।।

35. कामवेदना नाशक स्तुति

पुष्पाणि सन्ति सकलानि नपुंसकानि
हर्षन्ति तानि वनिता–नर–संगयोगात्।
कामस्त्रिवेदसहितः पततीह कामं
देवेन्द्रपुष्पपतनाच्छलतोऽभिमन्ये।।35।।

पुष्प रूप में खिले जीव सब, भाव नपुंसक वेद धरें
तभी कभी नर से हर्षित हों, नारी संग भी हर्ष धरें।
देवेन्द्रों की पुष्प वृष्टि जो, प्रभु सम्मुख नित गिरती है
तीन वेद से सहित काम यह, गिरता है यह कहती है।।35।।

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टि शोभिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–सभी पुष्प नपुंसक वेद वाले होते हैं। यहाँ तीनों वेदों से सहित काम ही देवेन्द्रों के द्वारा होने वाली पुष्प वृष्टि के छल से अत्यधिक गिर रहा है, ऐसा मैं

मानता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो मेघधारचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं निष्कामात्मने जिनाय नमः।।

36. भू सम्पदादायी स्तुति

तीर्थंकर-प्रकृतिपुण्य-वशेनभूमि-
र्दृष्टाऽतिकान्त-मणिकाभरणैक-कान्ता।
स्वच्छा च भावनसुरैर्विहितोपकारा
धान्यादि-पुष्पविभवै-र्हसतीव नारी।।36।।

पुण्य प्रकृति तीर्थंकर से ही, भूमि रत्नमय स्वयं हुई
भवनवासि देवों के द्वारा, स्वच्छ दिख रही साफ हुई।
पुष्प फलों से भरी दिख रही, धान्यादिक से पूर्ण तथा
तीर्थंकर का गमन देखकर, भूनारी यह हँसे यथा।।36।।

ॐ ह्रीं देवातिशयपवित्राय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-तीर्थंकर प्रकृति के पुण्य के कारण से भूमि अत्यन्त सुन्दर रत्नों के आभूषणों को धारण करने वाली एक स्त्री सी दिखाई देती है (1), वह भूमि भावनवासी देवों के द्वारा की गई सेवा से स्वच्छ होती है (2), और वह मानो धान्य आदि पुष्पों के वैभव से सहित हुई हंसती हुई नारी ही हो (3)।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो तंतुचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सर्वसुखसम्पन्नाय जिनाय नमः।।

37. सुभिक्ष करी स्तुति

वायुः प्रभोः पथविहारदिशानुसारी
वायुः सुगन्धघन – मिश्रित-सौख्यकारी।

वायु: सुगन्ध–जल – वर्षण – चित्तहारी
वायु: सुरस्त्रिदशराज–निदेश–धारी।।37।।

जिधर दिशा में गमन आपका, उसी दिशा में वायु बहे
अति सुगन्धमय पवन सूंधकर, अचरज करता विश्व रहे।
मन्द–मन्द अति जल वर्षा में, भी सुगन्ध सी आती है
वायु कुमार देव से सेवा, इन्द्राज्ञा करवाती है।।37।।

ॐ ह्रीं चतुर्णिकायदेवपूजिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–वायु प्रभु के पथ विहार की दिशा के अनुसार बहती है (4), वह वायु अत्यधिक सुगन्ध से मिश्रित हुई सुखकारी होती है (5), सुगन्धित जल की वर्षा के साथ वायु बहती है। (6) यह वायु कुमार देव मुख्य इन्द्र की आज्ञा को धारण करने वाले हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो सिहाचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सर्वदेवपदपूजिताय वीराय नम:।।

38. चित्त हरण करी स्तुति

न्यासो हि यत्र चरणस्य विनिर्मितानि
पद्मानि सौरभमयानि सुवर्णकानि।
देवैर्नभांसि विहृतौ कुसुमार्पितानि
ध्यानान् मनांसि यदि मेऽपि किमद्भुतानि।।38।।

देवों द्वारा पद विहार में, नभ में कमल रचे जाते
वही कमल फिर स्वर्णमयी हों, अरु सुगन्ध से भर जाते।
आप चरण के न्यास मात्र से, कुसुम इस तरह होते हैं
अद्भुत क्या यदि आप ध्यान से, मन: कमल मम खिलते हैं।।38।।

ॐ ह्रीं पादन्यास कमलरचिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–

महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - जहाँ आपके चरण रखे गए वहीं पर देवों के द्वारा निर्मित हुए वे कमल सुगन्धमय और सुवर्ण के हो गए। देवों ने विहार के समय आकाश को कुसुम मय कर दिया। यदि आपके ध्यान से मेरे मन: प्रदेश भी ऐसे ही सुगन्धित और स्वर्णमय हो जाएँ तो इसमें आश्चर्य क्या है ?

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो पवणचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं युगल-पाद-पूजिताय वीराय नम:।।

39. मिन्न वर्धक स्तुति

दिव्यध्वनि-र्वहति यस्तु मुखारविन्दा-
दर्धं च तस्य खलु मागधजातिदेवा:।
दूरं तु वीर! सहजेन विसर्पयन्ति
मैत्रीं मिथ: सदसि भूरि विभावयन्ति।।39।।

आप मुख कमल से हे भगवन! दिव्य ध्वनि जो खिरती है
मागध जाति देव से आधी, वही दूर तक जाती है।
इसीलिए वह अर्ध मागधी, कहलाती सुखकर भाती
तथा परस्पर में मैत्री भी, जीवों में देखी जाती।।39।।

ॐ ह्रीं मैत्री प्रसारकाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-हे वीर ! जो दिव्य ध्वनि आपके मुखकमल से प्रवाहित होती है, उसका आधा भाग मागध जाति के देव सहज ही दूर तक फैला देते हैं।(8) तथा सभा में परस्पर मैत्री को खूब बनाए रखते हैं। (9)

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो उग्गतवाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं दिव्यवचनकराय वर्धमानाय नम:।।

40. निर्मल हृदय करी स्तुति

नैर्मल्यभाव-मभितो धरतीशमाप्तं
दिग् राजिका दश विभो!गगनं विधूल्य:।
सर्वर्तु-पुष्प-फल-पूरित-भूरुहाश्च
व्याह्वान-मर्पित-सुरौघ इत: करोति।।40।।

अरु विहार के समय गगन भी, निर्मल भाव यहाँ धरता
दशों दिशायें धूलि बिना ही, नभ चहुँ ओर सदा करता।
सभी ऋतू के पुष्प फलों से, वृक्ष लधे इक संग दिखते
आओ-आओ इधर आप सब, देव बुलावा भी करते।।40।।

ॐ ह्रीं सर्वदिक् तमोहराय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आप ईश, आप्त के चारों ओर आकाश निर्मलता धारण करता है।(10) दशों दिशाऐं हे विभो ! धूलि रहित होती है। (11), वृक्ष सभी ऋतुओं के पुष्प-फलों से भरे रहते हैं।(12), मुख्य देवों का समूह इस ओर बुलावा करते हैं।(13)

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो दित्ततवाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं नैर्मल्यमन: कराय वर्धमानाय नम:।।

41. धर्म चक्र प्रवर्तनकरी स्तुति

नाशीर्वच: प्रहसनं प्रविलोकवार्ता
तीर्थप्रवर्तनपरो जगतोऽधिनाथ:।
पश्यन्तु तस्य ककुभन्तर-भासमानं
तेजोऽधिकाग्र-गमनं पृथुधर्मचक्रम्।।41।।

नहीं कोई आशीष वचन हैं, हँसे देख कर बात नहीं
फिर भी तीर्थ प्रवर्तन होता, तीन जगत के नाथ यही।

देखो–देखो यही दिखाने, धर्म चक्र आगे चलता
अति प्रकाश चहुँ ओर फैलता, सभी दिशा जगमग करता।।41।।

ॐ ह्रीं धर्मचक्रप्रवर्तकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–न आशीष वचन देते हैं, न हँसते हैं, न देखते हैं और न बात करते हैं, फिर भी इस जगत् के अधिनाथ तीर्थ प्रवर्तन में तत्पर हैं। उन तीर्थनाथ के विशाल धर्मचक्र को देखो जो धर्मचक्र सर्व दिशाओं को प्रकाशित कर रहा है और प्रकाश की अधिकता वाला वह आगे चल रहा है। (यहाँ देवकृत चौदह अतिशय दर्शाये हैं।)

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो तत्ततवाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं धर्मचक्र–प्रवर्तकाय वीराय नमः।।

42. सर्वसिद्धि दायक स्तुति

चित्तं मदीयमिह लीनमुत त्वयि स्यात्
त्वद्रूपभा मयि मनः–परमाणु–देशे।
जानामि नो किमिति संघटते समेति
किं वाम्रबीज–गणनेन रसं बुभुक्षोः।।42।।

मेरा चित्त आप में हे प्रभु! लीन हुआ क्या पता नहीं
या फिर आप रूप की आभा, मन में आती पता नहीं।
कैसा क्या यह घटित हो रहा, नहीं पता कुछ मुझको देव!
आम गुठलियों को क्या गिनना रस चखने की इच्छा एव।।42।।

ॐ ह्रीं अतितृप्तिकराय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – इस भक्ति में मेरा चित्त आप में लीन हुआ है अथवा आपके रूप की

आभा मेरे मन के परमाणु प्रदेशों में समा रही है। क्या घटित हो रहा है? मैं नहीं जानता हूँ। ठीक भी है रस चखने वाले को आम की गुठलियों को गिनने से क्या प्रयोजन ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो महातवाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं असि आ उ सा महावीराय नमः।।

43. आत्मगुणों की शक्तिवर्धक स्तुति

भक्तिश्च सा स्मर–रुषाग्नि–घनौघवर्षा
मुक्तिश्च सा स्तवनतः स्वयमेति हर्षात्।
शक्तिश्च तृप्यतितरां गुणपूर्णतायां
ज्ञप्तिश्च विंदति भृशं तव चेतनाभाम्।।43।।

भक्ति वही जो काम क्रोध की, अग्नि बुझाने वर्षा हो
मुक्ति वही जो संस्तुति करते, स्वयं आ रही हर्षित हो।
आप गुणों की पूर्ण प्राप्ति में, तुष्ट करे जो शक्ति वही
आप चेतना की आभा का, अनुभव करता ज्ञान वही।।43।।

ॐ ह्रीं आत्मगुणवर्धकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–भक्ति तो वही है, जो काम और क्रोध की अग्नि के लिए घनीभूत वर्षा हो। मुक्ति भी वही है, जो आपके स्तवन से स्वयं हर्ष–हर्ष से चली आए। शक्ति उसी का नाम है जो आपके गुणों की पूर्णता में खूब तृप्त करें। जानना भी वही है, जिससे आपकी चेतना की आभा अच्छी तरह अनुभव में आए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो घोरतवाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं अनन्तशक्ति–सम्पन्नाय जिनाय नमः।।

44. निश्चिन्त करने वाली स्तुति

भृत्योऽपि भूपतिमरं तु सदाश्रयामि
प्रोत्थाय मस्तक-मतीव-मदेन याति।
त्रैलोक्यनाथ-पद-पंकज-भक्ति-भक्तो
निश्चिन्तितां यदि दधाति तु विस्मय: किम्।।44।।

मैं राजा के निकट रह रहा, यही सोचकर नौकर भी
अपना मस्तक ऊँचा करके, गर्व धारकर चले तभी।
तीन लोक के नाथ आपके, चरण कमल भक्ती वाला
भक्त यहाँ निश्चिन्त बना यदि, क्या विस्मय प्रभु रखवाला।।44।।

ॐ ह्रीं भक्तचिन्तापहरणाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-मैं तो राजा का सदा निकट से आश्रय लेता हूँ, ऐसा नौकर भी मुख ऊपर करके बड़े मद में चलता है। फिर यहाँ तीन लोक के नाथ के चरण कमलों की भक्ति करने वाला भक्त यदि निश्चिन्तता धारण करता है तो इसमें विस्मय क्या करना ?

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो घोरपरक्कमाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं सर्वचिन्ताविमुक्ताय जिनाय नम:।।

45. हिंसा नाशक स्तुति

सत्यं त्वया सुविहिताऽत्र मुनेरहिंसा
बाह्यान्तरङ्ग-यम-माप्य समाचरत् ताम्।
अन्त: प्रभाव इति केवलबोध-सूति-
र्यज्ञार्थ-हिंसन-निवृत्ति-बहि-र्विभूति:।।45।।

सत्य कहा है आप वीर ने, मुनि का एक अहिंसा धर्म
भीतर बाहर संयम पाकर, आप बढ़ाये उसका मर्म।

उसी धर्म से अन्तरंग में, केवलज्ञान प्रकाश हुआ
यज्ञों की हिंसा रुक जाना, बाहर धर्म प्रभाव हुआ।।45।।

ॐ ह्रीं अहिंसा-स्वभावाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आपने इस जगत् में मुनि के लिए अहिंसा का जो उपदेश दिया है वह सत्य ही दिया है। आपने अन्तरंग और बाह्य यम प्राप्त करने उस अहिंसा का ही आचरण किया था। उसी अहिंसा का यह अंतरंग प्रभाव है कि इस प्रकार केवलज्ञान आत्मा में उत्पन्न हुआ और यज्ञों के लिए की जाने वाली हिंसा रुक गई, यह उस अहिंसा का बाह्य प्रभाव था।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो घोर गुण बंभयारीणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं अहिंसापरमस्वभावाय जिनाय नमः।।

46. मनोरथ सफलकरी स्तुति

ज्ञानस्य वा सुखगुणस्य च कस्यचिच्च
पर्यायमात्र कलिकामह-मात्मुकामः।
अन्तस्त्वयि स्वगुण-पर्यय-भासमाने-
प्यस्मादृशः कथमहो नु भवेत् सतृष्णः।।46।।

सुख गुण की या ज्ञान गुणों की, किसी गुणों की भी पर्याय
एक समय की कणी मात्र ही, तव गुण की मुझमें आ जाय।
अपनी ही गुण-पर्यायों से, भीतर आप प्रकाशित हो
फिर भी मुझ जैसा कैसे यूं, तृष्णा पीड़ित रहे अहो।।46।।

ॐ ह्रीं सर्वमनोरथपूर्तिकराय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-ज्ञान गुण की हो या सुख गुण की, किसी भी एक गुण की पर्याय मात्र कणिका को मैं चाह रहा हूँ। अहो ! आप तो अपने गुण-पर्यायों से अन्तरंग में प्रकाशमान हैं। ऐसा होने पर भी मेरे जैसा तृष्णा सहित बना रहे, यह कैसे हो सकता है ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो मणबलीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं स्वगुणपर्यय–भासमानाय वीराय नमः।।

47. मुख नेत्रादि पीड़ा विनाशक स्तुति

अत्यन्त–पूत– चरणं तव सर्व–वन्द्यं
चित्ते निधाय यदहं स्वमुखं विपश्यन्।
उल्लासयामि मुखदर्पण– दर्शनात्ते
सीदामि साम्यविकलात् स्वमुखेऽतिवीर!।।47।।

अति पवित्र जो चरण कमल हैं, वन्दनीय नित सदा रहे
उनको चित में धारणा करके, अपना मुख हम देख रहे।
अति उल्लासित मम मन होता, किन्तु आप मुख दर्पण देख
आप सरीखा साम्य हमारे, मुख पर नहीं देख कर खेद।।47।।

ॐ ह्रीं साम्यमुखाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – इस पृथ्वी पर सभी जनों से वन्दनीय आपके अत्यन्त पवित्र चरण कमल को अपने चित्त में धारकर के जब मैं अपना मुख उन चरणों में देखता हूँ तो बहुत ही उल्लसित होता हूँ। किन्तु हे अतिवीर ! आपके मुख दर्पण के दर्शन से अपने मुख पर साम्य की कमी देखने से मैं खेद–खिन्न होता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो वच बलीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ नमो भगवते वीर जिनाय नमः।।

48. सौभाग्यवर्धक स्तुति

सद्–द्रव्यसंयम–पथे प्रथमं प्रयुज्य
स्वं भावसंयमनिधौ तदनुव्यधायि।
नोल्लंघयन् क्रमविधिं क्रमविद् विधिज्ञो
मार्तण्डवच्चरति वै महतां स्वभावः।।48।।

पहले आप द्रव्य संयम के, पथ पर खुद को चला दिए
तभी भाव संयम की निधि भी, आप स्वयं ही प्राप्त किए।
जो क्रम जाने विधि को जाने, क्या उल्लंघन कर सकता
महापुरुष का यह स्वभाव है, सूरज सम पथ पर चलता।।48।।

ॐ ह्रीं द्रव्यभावसंयम निधि प्राप्ताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-समीचीन द्रव्य संयम के पथ पर अपने आप को सर्वप्रथम नियुक्त किया। उसके अनुरूप आपने स्वयं को भाव संयम की निधि में लगाया। क्रम को जानने वाले और विधि के ज्ञाता पुरुष सूर्य के समान कभी क्रम विधि का उल्लंघन करते हुए नहीं चलते हैं। वास्तव में महान् पुरुषों का यह स्वभाव है।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो काय बलीणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः सौभाग्यसंपद्करााय वीराय नमः।।

49. अकास्मिक फल प्रदायी स्तुति

सापेक्षतोऽपि निरपेक्षगतोऽसि नूनं
बद्धोपि मुक्त इव मुक्तिरतोऽसि बद्धः।
एकोऽप्यनन्त इति भासि न ते विरोधः
स्वात्मानुशासनयुते जिनशासनेऽपि।।49।।

होकर के सापेक्ष आप प्रभु, सबसे ही निरपेक्ष हुए
कर्म बन्ध से बद्ध मुक्त से, मुक्ती में रत बद्ध हुए।
होकर एक अनन्त भासते, इसमें कोई विरोध नहीं
आतम अनुशासन से युत हो, जिनशासन से युक्त वहीं।।49।।

ॐ ह्रीं परस्पर-विरुद्ध-धर्मसहिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–आप सापेक्ष होते हुए भी निरपेक्ष हुए हो। निश्चित ही आप बद्ध होकर मुक्त जैसे दिखते हो आप मुक्ति में रत होते हुए भी बद्ध हो, आप एक होकर भी अनन्त दिखते हो। इसमें आपको कोई विरोध नहीं है। आप अपनी आत्मा के अनुशासन से युक्त होने पर भी जिनशासन में भी हो।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो आमोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं अनाहतविद्यायै अर्हं नमः।

50. धर्मानुराग वर्धक स्तुति

दृष्टोऽपि नो श्रुतिगतो न कदापि पूर्वं
स्पृष्टो मया न महिमानमहं न वेद्मि।
देवेश! भक्तिरसनिर्भर–मानसेऽस्मिन्
प्रत्यक्षतोऽप्यधिकरागमतिः परोक्षे।।50।।

पहले नहीं आपको देखा, नहीं सुना है कभी कहीं
नहीं छुआ है कभी आपको, जानी महिमा कभी नहीं।
भक्ति सुरस से भरे हुये इस, मेरे मन में आप मुनीश
नहीं हुए प्रत्यक्ष तथापि, मति में राग अधिक क्यों ईश।।50।।

ॐ ह्रीं आश्चर्यकर महिमा सहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–मैंने आपको कभी देखा नहीं है, पहले कभी भी आपका नाम नहीं सुना है, आपको छुआ भी नहीं है और न मैं आपकी महिमा को जाना है। फिर भी हे देवेश ! भक्ति से भरे मेरे मन में प्रत्यक्ष से भी अधिक राग–बुद्धि परोक्ष में हो रही है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति महावीराय नमः।।

51. विमुक्त व्यक्ति मेलापक स्तुति

अद्यापि ते प्रवचनाम्बु मन: पिपित्सा
पीत्वाऽपि तृष्यति विलोक्य पुन-र्दिदृक्षा।
एतन्मनोरथयुगस्य यदा हि पूर्ति:
साक्षाद् भवेन्मम विमुक्तिकथा तदाऽलम्।।51।।

तेरे वचन नीर को पीने, की इच्छा पी-पी कर भी
तृप्त नहीं होता मेरा मन, पुन: देखना लख कर भी।
दो ही मेरी मनो कामना, जब पूरण होंगी साक्षात्
मुक्ति कथा भी मेरी पूरी, हो जाएगी मेरी बात।।51।।

ॐ ह्रीं साक्षात् दर्शनकराय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आज भी आपके प्रवचन जल को पीने की इच्छा बनी है। मन आपके वचन जल को पी-पी कर भी प्यासा बना रहता है। आपको देखकर भी पुन: देखने की इच्छा बनी रहती है। आपके वचनामृत को पीने की और आपको देखने की ये दोनों मनोकामना मेरी जब साक्षात् पूर्ण हो जाएगी मेरी मुक्ति की कथा भी उसी समय समाप्त हो जाएगी।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो जल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं नम:।।

52. परलोक सुख करी स्तुति

पुण्यं त्वयोदित-तपोयम-पालनेन
भक्त्योर्जितेन भविनां शिवसाधनं ते।
पुण्यं निदानसहितं सुरसौख्यकामं
बन्धप्रदं न हि नयं समवैति जैन:।।52।।

कहा आपने जैसा जिनवर, मान उसे तप व्रत धरता
भव्यजनों की भक्ति का वह, पुण्य मोक्ष साधन बनता।

सुर सुख को जो चाह रहा हो, कर निदान यदि करता पुण्य
वही बन्ध का करण है नय, नहीं जानते जैनी पुण्य।।52।।

ॐ ह्रीं सकलनय विलसिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आपके द्वारा कहे हुए तप और यम का उत्साह के साथ पालन करने से और आपकी भक्ति से भाग्य जीवों को जो पुण्य होता है, वह मोक्ष का साधन बनता है। जो पुण्य निदान सहित और देह सुख की चाह वाला है वह बन्ध का कारण है। यह नय (नीति) जैन भी नहीं जानते हैं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो मल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्रीं द्वादशांगविद्याधारकाय जिनाय नमः।।

53. रत्नत्रय प्रदायी स्तुति

सम्यक्त्वमेव जिनदेव! तवैव भक्ति-
र्ज्ञानं तदेव चरितं व्यवहारमित्थम्।
तावत् करोतु भविकस्त्वदभेदबुद्धया
मुक्त्यंगना-रमणतात्म-सुखं न यावत्।।53।।

हे जिन! भक्ति आपकी नित ही, सम्यग्दर्शन कही गई
वही ज्ञान है वही चरित है, यह व्यवहारी बुद्धि रही।
रख अभेद बुद्धि से जिन में, तब तक यह व्यवहार करो
मुक्ति वधू का रमण आत्म सुख, जब तक ना तुम प्राप्त करो।।53।।

ॐ ह्रीं रत्नत्रयपूर्णाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - हे जिनदेव ! आपकी भक्ति ही सम्यग्दर्शन है। वह भक्ति ही सम्यग्ज्ञान है और उस भक्ति को करना ही सम्यक् चारित्र है। इस व्यवहार को भव्यजन आपमें अभेद बुद्धि के साथ तब तक करता रहे जब तक कि मुक्ति स्त्री में रमणता वाला आत्मसुख न प्राप्त हो जाए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो विप्पोसहितपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय नमः।।

54. प्रशंसा वर्धक स्तुति

रूपेण मुह्यसि जनं त्वममोह इष्टो
लोभं विवर्धयसि भूरि निशाम्य वाचम्।
तत्राप्युशन्ति सुजनं सुजना भवन्तं
दोषा गुणाय ननु चन्द्रकरैर्निदाघे।।54।।

मोहित करते आप रूप से, सभी जनों को हे निर्मोह!
सुन कर वचन और सुनने का, लोभ बढ़ाते हे निर्लोभ!।
फिर भी श्रेष्ठ पुरुष है कहते, श्रेष्ठ पुरुष केवल हैं आप
दोष गुणों के लिए हरे ज्यों, निशा चन्द्रमा से संताप।।54।।

ॐ ह्रीं श्रीगणधरमुनि सेविताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–आप रूप से लोगों को मोहित करते हो फिर भी आप मोह रहित माने जाते हो। आप वचन सुनाकर लोभ को और बढ़ाते रहते हो। फिर भी सज्जन पुरुष आपको ही सज्जन मानते हैं। सच ही है। दोष भी गुण के लिए होते हैं। क्या दोषा (रात्रि) गर्मी के दिन में चन्द्रमा की किरणों के द्वारा गुण वाली नहीं हो जाती है?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो सव्वोसहि पत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सर्वर्द्धिसहिताय महावीराय नमः।।

55. गुप्त सम्पदा दायक स्तुति

तुभ्यं ददामि कथयन् प्रददाति कश्चिन्
मौनेन दित्सति भवानति–गुप्तरूपात्।

सार्वाय वा रविरिहैव निरीह-बन्धु-
र्भव्याय तेन भुवने परमोऽसि दाता।।55।।

तुमको देता हूँ यह कहता, तब कोई कुछ देता है
किन्तु आप दें गुप्त रूप से, मौन धार यह देखा है।
ज्यों रवि सबका हित करता है, बिन इच्छा के बन्धु बना
उसी तरह भव्यों के हित में, तुम सम दाता कोई ना।।55।।

ॐ ह्रीं श्री सार्वाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-मैं तुम्हें दे रहा हूँ, ऐसा कहते हुए कोई कुछ देता है किन्तु आप भगवन् अति गुप्त रूप से मौन पूर्वक देते हो। जैसे रवि सभी के हित के लिये होता है और एक निरीह बन्धु है वैसे ही आप भव्यजीवों के लिए निरीह बन्धु हैं। इस लोक में इसी कारण से आप परम दाता हैं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो मुहणिव्विसड्ढि जिणाणं ।
मंत्र - ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं वीर जिणाणं नमः।

56. याचक संतुष्टि करी स्तुति

दित्सा प्रभो! त्वयि यदि प्रविदातुमस्ति
दातव्य एव मम वै मनसि स्थितार्थः।
दाता समो न तव मत्सम-याचको न
कांक्षाम्यहं किमपि नो भवतो भवन्तम्।।56।।

फिर भी यदि तुम इच्छा करते, देने की मुझको कुछ भी
दे ही देना आप प्रभू जी, जो मेरे मन में कुछ भी।
दाता तुम सम और नहीं है, और नहीं याचक मुझ सा
चाह नहीं कुछ तुमसे चाहूँ, तुमको या बनना तुम सा।।56।।

ॐ ह्रीं अयाचकवृत्तये क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–हे प्रभो ! आप के पास देने के लिए तो है और यदि आपकी देने की इच्छा हो तो मेरे मन में जो पदार्थ स्थित है उसे दे ही देना। आपके जैसा दाता नहीं है और मेरे जैसा कोई याचक भी नहीं है। मैं आपसे कुछ भी नहीं चाहता हूँ, मैं आपको ही चाह रहा हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दिट्ठिणिव्विसड्ढि जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं वड्ढमाणं नमः।

57. यात्रा विघ्न निवारक स्तुति

एवं चतुर्दशतिथा–वपहृत्य योगान्
ध्यानात् तुरीयशुभशुक्ल–वशात् प्रमुक्तः।
पावापुर–प्रमद–पद्म–सरोवरस्थो
निर्वाण–माप्य भुवनस्य शिरः प्रतस्थे।।57।।

योगों को संकोचित करके, इस विधि चौदस की तिथि को
चौथे शुक्ल ध्यान को ध्याकर, आप विमुक्त किए खुद को।
पावापुर के पद्म सरोवर, पर संस्थित प्रभु होकर के
आप महा निर्वाण प्राप्त कर, ठहरे लोक शिखर जा के।।57।।

ॐ ह्रीं पावापुर पद्म सरोवर स्थित निर्वाण प्राप्ताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ– इस प्रकार चतुर्दशी की तिथि में योगों को संकुचित करके चौथे शुभ शुक्ल ध्यान के कारण से मुक्त हुए। पावापुर के आनन्ददायी पद्म सरोवर पर स्थित होते हुए आप निर्वाण प्राप्त करके लोक के शिखर पर ठहर गए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो आसीविसाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सिद्धचक्राय वीराय नमः।

58. अन्तराय निवारक स्तुति

नष्टाष्टकर्मरिपुबाधक! ते नमोऽस्तु
स्वर्गापवर्ग-सुखदायक! ते नमोऽस्तु
विश्वैक-कीर्ति-गुण नायक! ते नमोऽस्तु
विघ्नान्तराय-विधि-वारक!ते नमोऽस्तु।।58।।

अष्ट कर्म रिपु बाधक नाशक, हे प्रभु तुमको नमन करूँ
स्वर्ग मोक्ष सुख के हो दायक, हे प्रभु तुमको नमन करूँ।
आप कीर्ति गुण नायक जग में, हे प्रभु तुमको नमन करूँ
अन्तराय विघ्नों के वारक, हे प्रभु तुमको नमन करूँ।।58।।

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टय सहिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - बाधा उत्पन्न करने वाले अष्ट कर्म शत्रुओं को नष्ट करने वाले हे भगवन्! आपको नमस्कार हो। स्वर्ग और मोक्ष के सुख देने वाले हे भगवन् आपको नमस्कार हो। विश्व में एकमात्र कीर्ति गुण के नायक हे भगवन् आपको नमस्कार हो। विघ्न करने वाले अन्तराय कर्म को रोक देने वाले हे भगवन् आपको नमस्कार हो।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो दिट्ठि विसाणं जिणाणं ।

मंत्र - ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टय सहिताय वीराय नमः।

59. विजेता कारक स्तुति

जेता त्वमेव समनः सकलेन्द्रियाणां
नेता त्वमेव गुणकांक्षि-तपोधनानाम्।
भेत्ता त्वमेव घनकर्ममहीधराणां
ज्ञाता त्वमेव भगवन्! सचराचराणाम्।।59।।

मन से सहित सकल इन्द्रिय के, तुम ही एक विजेता हो
जो गुण चाहें ऐसे मुनि के, एक मात्र तुम नेता हो।
घनी भूत जो कर्म शैल थे, उनको तुमने तोड़ दिया
सकल चराचर के ज्ञाता हो, निज में निज को जोड़ लिया।।59।।

ॐ ह्रीं लोकालोकज्ञायकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–मन सहित इन्द्रियों को जीतने वाले आप हो। गुणों की आकांक्षा करने वाले तपस्वियों के नेता आप ही हो। घनीभूत कर्म पर्वतों के भेदन करने वाले आप ही हो। हे भगवन् ! चराचर समस्त जगत् के ज्ञान आप ही हो।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो खीरसवीणं जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं विजितेन्द्रिय वर्धमानाय नमः।

60. अन्य मन्त्र तन्त्र प्रभाव रोधक स्तुति

हे वीर! सिद्ध–गतिभूषण! वीतकाम!
तुभ्यं नमोऽन्त्य–जिन–तीर्थकर!प्रमाण!।
सर्वज्ञदेव! सकलार्तविनाशकाय
तुभ्यं नमो नतमुनीन्द्र–गणेशिताय।।60।।

सिद्धगति के भूषण तुम हो, काम रहित हो तुम हो वीर
हे अन्तिम जिन तीर्थंकर प्रभु, तुम प्रमाण मम हर लो पीर।
सभी दुखों के नाशक तुमको, देव हमारे तुम्हें नमन
गणधर और मुनीश्वर नमते, हे परमेश्वर तुम्हें नमन।।60।।

ॐ ह्रीं वीतराग सर्वज्ञदेवाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–हे वीर ! हे सिद्ध गति के आभूषण ! हे काम रहित ! हे अन्तिम तीर्थंकर !

हे प्रमाण ! हे सर्वज्ञदेव ! आपके लिए नमस्कार हो। सकल दु:खों का विनाश करने वाले तथा मुनीन्द्र-गणधरों से नमस्कृत आपके लिए नमस्कार हो।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो महुरसवीणं जिणाणं ।

मंत्र - ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय परचक्रप्रमर्दनाय नम:।

61. जल भय निवारक स्तुति

ते तीर्थपुण्यजलमज्जनशुद्धभूता
भव्या: पुरा समभवन् कलिपापपूता:।
नाना-नयोपनय-सप्त-विभङ्ग-भङ्गे
तीर्थे निमज्जनविधे: किमु वञ्चित: स्याम्।।61।।

आप तीर्थ के पुण्य नीर में, डूब डूब कर शुद्ध हुए
भव्य हुए जितने भी पहले, धो कलि पाप विशुद्ध हुए।
नाना नय उपनय अरु जिसमें, सप्त भंग की लहरें हों
ऐसे तीरथ में डुबकी हम, लेने में क्यों वंचित हों?।।61।।

ॐ ह्रीं धर्म-तीर्थाधिपतये-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - आपके तीर्थ रूपी पुण्य जल में डूबकर शुद्ध हुए भव्य जीव पहले कलिकाल के पाप से अपने को पवित्र किये हैं। अनेक नय, उपनय, सप्त भंग की तरंगों के तीर्थ में डूबने की विधि से फिर मैं क्यों वंचित रहूँ।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो अमिय-सवीणं जिणाणं ।

मंत्र - ॐ ह्रीं अर्हते भगवते जलभयं स्तम्भय-स्तम्भय नम:।

62. संसार भय तारक स्तुति

बालेऽपि पालक इति प्रतिभासते यो
यो यौवनेऽपि मदकाम-भटाभिमर्दी।

संसार-सागर-तट-स्थित-पुण्यभाजां
सिद्धिं प्रपित्सुरभवत् तमहं नमामि।।62।।

बाल्य अवस्था में भी पालक, से प्रतिभासित होते आप
भर यौवन में भी मदमाते, काम सुभट को जीते आप।
पुण्यवान जो खड़े हुए हैं, संसृति सागर के तट पर
उन्हें सिद्धि में पहुँचाते थे, नमन आप को कर शिर धर।।62।।

ॐ ह्रीं श्रीं भवभयनिमज्जनतारकाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-जो बालपन में भी पालक की तरह दिखते थे। जो यौवन में भी घमण्ड और काम योद्धाओं का मर्दन किए हैं। जो संसार सागर के तट पर स्थित पुण्यात्मा जीवों को जो सिद्धि प्राप्त कराने की इच्छा करते थे उन भगवन् को मैं नमस्कार करता हूँ।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो सप्पिसवीणं जिणाणं ।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्री स्याद्वादिने जिनशासन वीराय नमः।।

63. उत्तम शरण दायक स्तुति

लोकोत्तमोऽसि जगदेकशरण्यभूतः
श्रेयान् त्वमेव भवतारकमुख्यपोतः।
ध्यानेऽपि चिन्तनमतौ सुकथा-प्रसङ्गे
त्वां संस्मरामि विनमामि च चर्चयामि।।63।।

तीन लोक में उत्तम तुम हो, पूर्ण जगत में एक शरण
भव तरने को इक जहाज हो, श्रेष्ठ तुम्ही हो करूँ वरण।
चिन्तन में भी ध्यान समय भी, और कथा के करने में
तुमको याद करूँ मैं प्रणमूँ, चर्चा करूँ सदा ही मैं।।63।।

ॐ ह्रीं श्री लोकोत्तमशरणाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–आप लोकोत्तम हो, जगत् में एक मात्र शरण्यभूत हो, आप ही श्रेष्ठ हो, संसार सागर से तारने वाले मुख्य जहाज हो। ध्यान में, चिन्तन की बुद्धि में और सुकथा के प्रसंग में भी मैं आपको ही स्मरण करता हूँ। आपको ही नमस्कार करता हूँ और आपका ही ध्यानपूर्वक अनुशीलन करता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहाणसाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्री लोकोत्तमशरणभूताय जिनाय नमः।

64. सर्व कार्य सफलतादायक स्तुति

यः संस्तवं प्रकुरुते भुवि भावभक्त्या
संस्थाप्य चित्त–कमले श्रृणुतेऽत्र चैतम्।
विघ्नं विहत्य सफलीभवतीष्टकार्ये,
ज्ञानं सुखं स लभते क्षणवर्धमानम्।।64।।

भाव भक्ति से इस प्रकार जो, वीर प्रभू का यह संस्तव
हृदय कमल में धार आपको, करता सुनता तव वैभव।
विघ्नों को वह नष्ट करे अरु, इष्ट कार्य में रहे सफल
हर क्षण बढ़ते ज्ञान सुखों का, पाओ तुम 'प्रणम्य' शिव फल।।64।।

ॐ ह्रीं श्री प्रतिक्षणवर्धमान–ज्ञानसुखादिगुणाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–इस पृथ्वी पर जो भव्य जीव भाव भक्ति के साथ अपने चित्त कमल में भगवान् को स्थापित करके इस स्तोत्र को करता है और सुनता है वह विघ्नों को नष्ट करके इच्छित कार्य में सफल होता है तथा हर क्षण बढ़ने वाले ज्ञान और सुख को प्राप्त करता है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहालयाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्री पंचनामधेयाय इष्टसिद्धि कराय वीराय नमः।

वलय अर्घ

विद्याब्धि–सूरि–पद–पङ्कज–सौरभालि–
शिष्य–प्रणम्य–मुनिना जिनदेव भक्त्या।
श्री वर्धमान–जिन–संस्तवनं व्यधायि
तस्य त्रिरत्न वलयेऽर्चनयोल्लसामि।।

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशत्दल कमलाधिपतये श्री वर्धमान जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आर्या छन्द

श्री वर्धमानसंस्तुति–रियं कृता प्रणम्यवार्धिना मुनिना।
आचार्य प्रमुखार्य–प्रगुरु–विद्यावार्धि–शिष्येण।।
वीरे निर्वाणगते शून्य चतुः पञ्चद्वितमे वर्षे।
मालवभूरतलामे पौषे मासि सितसप्तम्याम्।।

ॐ ह्रीं चतुः षष्टि ऋद्धि सहित वर्धमान जिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(जाप मंत्र 108 बार लौंग अथवा पीले चाँवल से)

ॐ ह्रीं चतुः षष्टि ऋद्धि सहित वर्धमान जिनेन्द्राय नमः।

ऋद्धि मंत्र

1. ॐ ह्रीं णमो ओहिबुद्धि जिणाणं।
2. ॐ ह्रीं णमो मणपज्जय जिणाणं ।
3. ॐ ह्रीं णमो केवलणाण जिणाणं।
4. ॐ ह्रीं णमो कोट्ठबुद्धि जिणाणं।
5. ॐ ह्रीं णमो बीजबुद्धि जिणाणं।
6. ॐ ह्रीं णमो पादाणुसारीणं जिणाणं।
7. ॐ ह्रीं णमो संभिण्णसोदाराणं जिणाणं।
8. ॐ ह्रीं णमो दूरासादणमदि जिणाणं।
9. ॐ ह्रीं णमो दूरफासत्तमदि जिणाणं।
10. ॐ ह्रीं णमो दूरघाणत्तमदि जिणाणं।
11. ॐ ह्रीं णमो दूरसवणत्तमदि जिणाणं।
12. ॐ ह्रीं णमो दूरदरसित्तमदि जिणाणं।
13. ॐ ह्रीं णमो दसपुव्वीणं जिणाणं।
14. ॐ ह्रीं णमो चउदसपुव्वीणं जिणाणं।
15. ॐ ह्रीं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं जिणाणं।
16. ॐ ह्रीं णमो पण्णसमणाणं जिणाणं।
17. ॐ ह्रीं णमो पत्तेयबुद्धाणं जिणाणं।
18. ॐ ह्रीं णमो वादित्तबुद्धीणं जिणाणं।
19. ॐ ह्रीं णमो अणिमाइड्ढि जिणाणं।
20. ॐ ह्रीं णमो महिमाइड्ढि जिणाणं।
21. ॐ ह्रीं णमो लघिमाइड्ढि जिणाणं।
22. ॐ ह्रीं णमो गरिमाइड्ढि जिणाणं।
23. ॐ ह्रीं णमो पत्तरिड्ढि जिणाणं।
24. ॐ ह्रीं णमो पाकामड्ढि जिणाणं।
25. ॐ ह्रीं णमो ईसत्तड्ढि जिणाणं।
26. ॐ ह्रीं णमो वसित्तड्ढि जिणाणं।
27. ॐ ह्रीं णमो अप्पडिघादड्ढि जिणाणं।
28. ॐ ह्रीं णमो अंतड्ढाणड्ढि जिणाणं।
29. ॐ ह्रीं णमो कामरूवड्ढि जिणाणं।
30. ॐ ह्रीं णमो गमणगामिड्ढि जिणाणं।
31. ॐ ह्रीं णमो जलचारणड्ढि जिणाणं।

32. ॐ ह्रीं णमो जंघाचारणड्ढि जिणाणं।
33. ॐ ह्रीं णमो पुप्फफल चारणड्ढि जिणाणं।
34. ॐ ह्रीं णमो अग्गिधूमचारणड्ढि जिणाणं।
35. ॐ ह्रीं णमो मेघधारचारणड्ढि जिणाणं।
36. ॐ ह्रीं णमो तंतुचारणड्ढि जिणाणं।
37. ॐ ह्रीं णमो सिहाचारणड्ढि जिणाणं।
38. ॐ ह्रीं णमो पवणचारणड्ढि जिणाणं।
39. ॐ ह्रीं णमो उग्गतवाणं जिणाणं।
40. ॐ ह्रीं णमो दित्ततवाणं जिणाणं।
41. ॐ ह्रीं णमो तत्ततवाणं जिणाणं।
42. ॐ ह्रीं णमो महातवाणं जिणाणं।
43. ॐ ह्रीं णमो घोरतवाणं जिणाणं।
44. ॐ ह्रीं णमो घोरपरक्कमाणं जिणाणं।
45. ॐ ह्रीं णमो घोर गुण बंभयारीणं जिणाणं।
46. ॐ ह्रीं णमो मणबलीणं जिणाणं।
47. ॐ ह्रीं णमो वच बलीणं जिणाणं।
48. ॐ ह्रीं णमो काय बलीणं जिणाणं।
49. ॐ ह्रीं णमो आमोसहिपत्ताणं जिणाणं।
50. ॐ ह्रीं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।
51. ॐ ह्रीं णमो जल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।
52. ॐ ह्रीं णमो मल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।
53. ॐ ह्रीं णमो विप्पोसहितपत्ताणं जिणाणं।
54. ॐ ह्रीं णमो सव्वोसहि पत्ताणं जिणाणं।
55. ॐ ह्रीं णमो मुहणिव्विसड्ढि जिणाणं ।
56. ॐ ह्रीं णमो दिट्ठिणिव्विसड्ढि जिणाणं ।
57. ॐ ह्रीं णमो आसीविसाणं जिणाणं।
58. ॐ ह्रीं णमो दिट्ठि विसाणं जिणाणं ।
59. ॐ ह्रीं णमो खीरसवीणं जिणाणं ।
60. ॐ ह्रीं णमो महुरसवीणं जिणाणं ।
61. ॐ ह्रीं णमो अमिय-सवीणं जिणाणं ।
62. ॐ ह्रीं णमो सप्पिसवीणं जिणाणं ।
63. ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहाणसाणं जिणाणं।
64. ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहालयाणं जिणाणं।

जय माला

वर्धमान जिनदेव की जय त्रिशला नन्दन वीर की जय
निज चेतन की परिणत में रत ज्ञानानन्द स्वभाव रहा
सामायिक में ध्यान समय में जिनको चेतन भाव रहा।
ज्ञान चेतना में केलि कर शुद्धातम महावीर की जय।
राग रोग के हरने वाले काम क्रोध मद नाशन हारे।
भव सागर से पार लगाते सन्मति दायी वीर की जय।।

सब जीवों पर करुणा धरते शत्रु पर भी समता रखते
उग्र परिषह विजयी मुनिवर महावीर भगवान की जय।।
बारह वर्ष तपे तप प्रतिदिन केवलज्ञान स्वभाव लिया
पीर हरी चन्दबाला की उपकारी जिनवर की जय।।
गौतम गणधर लख के जिनको सुध–बुध खुद की भूल गए।
शिष्य बन गए यतिवर सबही वर्धमान भगवान की जय।।

जिनकी पूजा भाव लिए चल मेंढक देव महान बना
श्रेणिक, प्रीतिंकर लाखों जन ज्ञान लिए जिनराज की जय।।
ऋजुकूला नदी के तट पर ग्राम जृंभिका में उपजा
केवलज्ञान प्रकाशित जग में श्रमण प्रमुख जिनराज की जय।।
पावापुर निर्वाण भूमि पे तुमने सिद्ध प्रयाण किया।
जन्म मरण तारक जिनवर वर्धमान भगवान की जय।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

श्री निर्वाणक्षेत्र का अर्घ्य

जल गंध अक्षत पुष्प चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगत सौं, जोरकर विनती करौं।।
सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरी कैलाश कों।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास कों।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महाअर्घ्य

मैं देव श्री अरहन्त पूजूँ, सिद्ध पूजूँ चाव सों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ, साधु पूजूँ भाव सों।।
अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ, द्वादशांग रची गनी ।
पूजूँ दिगम्बर गुरु चरण शिव, हेत सब आशा हनी।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दश-विधि, दयामय पूजूँ सदा।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहिं कदा।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम, चैत्य चैत्यालय जजूँ।
पंचमेरु नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुर पूजित भजूँ।।
कैलाश श्री सम्मेद गिरी, गिरनार मैं पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ सर्वदा।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ, बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस-वसु जय, होय पति शिवगेह के।।

दोहा- जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ , बहु विधि भक्ति बढ़ाय।।

ॐ ह्रीं भावपूजा भाववन्दना त्रिकालपूजा त्रिकालवन्दना करै करावै भावना भावै श्रीअरहन्त जी, सिद्ध जी, आचार्य जी,उपाध्याय जी, सर्व साधु जी पंच-परमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। दर्शन विशुद्धयादि षोडश कारणेभ्यो

नमः। उत्तम क्षमादि दशलाक्षण धर्मेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्चारित्रेभ्यो नमः। जल के विषै, थल के विषै, आकाश के विषै, गुफा के विषै, पहाड़ के विषै, नगर नगरी विषै, उर्ध्वलोक, मध्य लोक, पाताल लोक विषै विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालय जिन बिम्बेभ्यो नमः। विदेह क्षेत्रे विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः। पाँच भरत, पाँच ऐरावत दश क्षेत्र संबंधी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनबिम्बेभ्यो नमः। नंदीश्वरद्वीप संबंधी बावन जिन-चैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयेभ्यो नमः। श्री सम्मेद शिखर, कैलाश, चम्पापुर, पावापुर, गिरनार, सोनागिरि, तारंगा, मथुरा आदि सिद्ध क्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबद्री, मूड़बद्री, देवगढ़, चन्देरी, पपौरा, हस्तिनापुर, अयोध्या, राजगृही, तारंगा चमत्कार, महावीरजी, पद्मपुरी, तिजारा, अंतरिक्ष पारसनाथ, मक्सी आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः। श्री चारण ऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नमः। श्रीजिन सहस्रनामेभ्यो नमः। उज्जैन (अपने नगर का नाम) नगर में स्थित समस्त जिनमन्दिर, जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः अनर्घ्य-पद प्राप्तये सम्पूर्ण अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक कायोत्सर्ग करें (नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

शान्तिपाठ

(शान्तिपाठ बोलते समय पुष्पक्षेपण करते रहना चाहिये)

चौपाई

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी, शील गुण-व्रत संयम-धारी।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमल-दल लाजैं।।
पंचम चक्रवर्ति पद-धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इन्द्र-नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शान्ति-हित शान्ति-विधायक।।
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा।

छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।।
शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई, जगत् पूज्य पूजौ सिरनाई।
परम शान्ति दीजै हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार संघ को।।

बसन्ततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुट–हार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।
सो शान्तिनाथ वर वंश जगत् प्रदीप,
मेरे लिये करहिं शान्ति सदा अनूप।।

इन्द्रवज्रा

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीनकों औ यतिनायकों को।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन! शान्ति को दे।।
होवै सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवै वर्षा समय पै, तिलभर न रहे व्याधियों का अन्देशा।।
होवै चोरी न जारी, सुसमय वरतै हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारैं, जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी।।

(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

दोहा– घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शान्ति करो सब जगत् में, वृषभादिक जिनराज।।

(अब हाथ जोड़कर भगवान् से प्रार्थना करें)

शास्त्रों का हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का।
सद्व्रतों का सुजस कहके, दोष ढाकूँसभी का।।
बोलूँ प्यारे वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तोलों सेऊ चरण जिनके, मोक्ष जो लों न पाऊँ।।

आर्या छन्द

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तबलौं लीन रहूँ प्रभु, जबलौं न पाया मुक्ति पद मैंने।

अक्षर पद मात्रा से दूषित, जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव दुःख से।।
हे जगबन्धु जिनेश्वर! पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।।
पुष्पांजलिं क्षिपामि (एक कायोत्सर्ग करें)

विसर्जन पाठ

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तैं परम गुरु, सो सब पूरण होय।। 1।।
पूजन विधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान।
और विसर्जन हूँ नहीं, क्षमा करो भगवान्।। 2।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव।। 3।।
आये जो-जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमाण।
ते अब जावहूँ कृपाकर, अपने-अपने थान।। 4।।
श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय।
भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाय।।
(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

परिक्रमा विनती (जिनस्तुति) (चौपाई)

मैं तुम चरण-कमल गुणगाय, बहु विधि भक्ति करी मन लाय।
जनम जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि।।
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरण मिटावो मोहि।
बार-बार मैं विनती करूँ, तुम सेवा भवसागर तरूँ।।
नाम लेत सब दुःख मिट जाय, तुम दर्शन देख्या प्रभु आय।

तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूँ चरण तव सेव।।
मैं आयो पूजन के काज, मेरो जनम सफल भयो आज।
पूजा करके नवाऊँ मैं शीश, मुझ अपराध क्षमहू जगदीश।।

दोहा– सुख देना दु:ख मेटना यही आपकी बान।
मो गरीब की वीनती, सुन लीज्यो भगवान्।।
पूजन करते देव की, आदि मध्य अवसान।
सुरगन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान।।
जैसी महिमा तुम विषैं, और धरैं नहिं कोय।
सूरज में जो जोति है, नहिं तारागण होय।।
नाथ तिहारे नाम तैं, अघ छिन माहि पलाय।
ज्यों दिनकर प्रकाशतैं, अंधकार विनशाय।।
बहुत प्रशंसा क्या करूँ, मैं प्रभु बहुत अज्ञान।
पूजाविधि जानूँ नहीं, शरण राखि भगवान्।।
एक कायोत्सर्ग करें, (नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)